RJPP, Vol. 15, No. 3, 2017, ISSN (P) : 0976-3635, (e) :2454-3411, Impact Factor 4.0000 (ICRJIFR)
UGC Approved Journal No. 43279

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दूत व्यवस्था का समीक्षात्मक अध्ययन

***डॉ. बृजेन्द्र सिंह गुर्जर,**डॉ. दर्शी चतुर्वेदी**

**प्राचार्य, अग्रवाल कन्या महाविद्यालय,गंगापुरसिटी,*
***प्रवक्ता, अग्रवाल कन्या महाविद्यालय,गांपुरसिटी*

Reference to this paper should be made as follows:
डॉ. बृजेन्द्र सिंह

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दूत व्यवस्था का समीक्षात्मक अध्ययन,

RJPP 2017, Vol. 15, No. 3, pp. 55-60, Article No. 8 (RP585)

Online available at : *http://anubooks.com/?page_id=2004*

साराशं

प्राचीन भारत में राज्य सुसंचालन हेतु राजदूत और चर के सहयोग की आवश्यकता स्वीकार की गई है। ये दोनों राजकर्मचारी उपयोगी और आवश्यक बतलाये गये है। लगभग सभी राजशास्त्र प्रेणताओं ने राजा के कर्त्तव्य पालन के लिये राजदूत और गुप्तचर की उपयोगिता प्रमाणित की है। युद्व और शान्ति दोनों कालों में राज्यों में निरन्तर सम्बन्ध बनाये रखने के लिये दूतों की आवश्यकता होती है। वस्तुतः विदेश नीति का संचालनदूतों के हाथ में होता है। उसकी सफलता दूतों की कार्यकुशलता और राजभक्ति पर निर्भर करती है। प्राचीन समय में राज्यों में सन्धियां भी दूतों द्वारा सम्पन्न की जाती थी यद्यपि राजाओं द्वारा उनका अनुमोदन होने पर ही उन्हे लागू किया जाता था। दूत राजा के मुख के समान होता है। कौटिल्य ने दूतों के निम्न प्रकार बताये है

१. निसृष्टार्थ
२. परिमितार्थ
३. शासनहर

कौटिल्य का मत है कि दूत वैध रूप से गुप्तचर है। अतः वह कार्यसिद्वि के लिये अर्थात अपने स्वामी के लिये किसी रूप को ग्रहण कर सकता है। कौटिल्य के अनुसार दूतों के निम्न कार्य है चूंकि दूत राजा के मुख, ऑख, कान और नाक के समान होते है। अतः राजा के सन्देश दूसरे राजाओं तक ले जाना तथा उनके सन्देशों का उत्तर लाकर अपने राजा तक पहुँचाना, समय पडने पर पराक्रम दिखाना, शत्रु पक्ष के अच्छे लोगों सेनापति, मंत्री, आमात्य आदि को तोडकर अपने पक्ष में करने के प्रयास करना, शत्रु के मित्रों को उससे विमुख करना और शत्रु देश में रहकर गुप्तचरों के कार्यो का निरीक्षण, पथ-प्रदर्शन एंव निर्देशन करना। दूतों के प्रमुख कर्त्तव्यों के अन्तर्गत पर-राजा को अपने राजा का सन्देश देना, सन्धियों का पालन कराने की व्यवस्था करना,मित्र संग्रह तथा शत्रु और शत्रु मित्रों की मण्डली में भेद उत्पन्न करना, गुप्तरूप से दूसरे राजा की नीतियों का ज्ञान करना आदि हे।

कौटिल्य ने दूत व्यवस्था के साथ-साथ चर व्यवस्था का भी उल्लेख किया है। कौटिल्य राज्य से सम्बन्धित आन्तरिक एंव बाह्य बाधाओं आदि के ज्ञान के लिये कुछ ऐसे कर्मचारी नियुक्त करता था। इस कर्मचारी को चर कहॉ जाता था। कौटिल्य ने चर व्यवस्था के संगठन को दृष्टि में रखकर चरों की ६ श्रेणियों का उल्लेख किया है।

मूल शब्द *: कौटिल्य, दूत व्यवस्था, राजा, कार्य, कूटनीति, व्यवहार, परराष्ट्र सम्बन्ध गुप्तचर व्यवस्था, शत्रु, विवेक*

प्रस्तावना

प्राचीन भारत में राज्य सुसंचालन हेतु राजदूत और चर के सहयोग की आवश्यकता स्वीकार की गई है। ये दोनों राजकर्मचारी उपयोगी और आवश्यक बताये गये है। युद्व और शान्ति दोनों कालों में राज्यों में निरन्तर सम्बन्ध बनाये रखने के लिये दूतों की आवश्यकता होती है। वस्तुतः विदेश नीति का संचालन दूतों के हाथ में होता है। उसकी सफलता दूतों की कार्यकुशलता और राजभक्ति पर निर्भर करती है। प्राचीन समय में राज्यों में सन्धियां भी दूतों द्वारा सम्पन्न की जाती थी यद्यपि राजाओं द्वारा उनका अनुमोदन होने पर ही उन्हे लागू किया जाता था।

भारतीय नीतिशास्त्र के आचार्यो ने राजनीति के अन्तगर्त दूत व्यवस्था को राज्य के महत्वपूर्ण अंग के रूप में प्रस्तुत किया है। इसका मूल कारण यह है कि भारतवर्ष में दूत व्यवस्था प्रारम्भ से ही रही है। वैदिक साहित्य में दूत परम्परा का उल्लेख उसकी प्राचीनता को स्पष्ट करता है। वैदिक सूक्तों में दूत के विशय में अनेकानेक उल्लेख प्राप्त होते है। वेद में दूत के लिये **स्पर्श तथा प्रणिधि** का शब्द का प्रयोग मिलता है।

वैदिक साहित्य के उपरान्त लिखे गये उत्तर वैदिक साहित्य में दूत के कई पर्याय शब्दों का प्रयोग उपलब्ध होता है। मुख्य रूप से **चर, स्पर्श, प्रेस्य, दूत, पालागल, प्रहित, बलगम** इत्यादि शब्द यथासम्भव प्रयुक्त हुये है। स्पष्ट शब्द का प्रयोग अथर्ववेद में कई स्थानों में होता है।

ऋग्वेद में अग्नि को देवताओं का दूत कहा गया है। इसमें राजनीति के दैवी सिद्धान्त में दूत की उपकल्पना का प्रारम्भिक संकेत प्राप्त होता है। ऋग्वेद में वरून को भी दूतो का अधिपति कहा गया है। इस प्रकार वैदिक एवं उत्तर वैदिक साहित्य में दूत व्यवस्था के प्रारम्भिक स्वरूप के बारे में संकेत प्राप्त होते है। यद्यपि वहॉ यह स्पष्ट नही है कि दूत व्यवस्था अथवा गुप्तचर व्यवस्था का क्रियान्वयन किस प्रकार किया जाता था। इसके लिये तो हमें उत्तरवर्ती साहित्य पर ही अधिकांश रूप में निर्भर रहना पडता है। उत्तरवैदिक साहित्य के उपरान्त रामायणकाल में दूत परम्परा के विषय में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध होती है। वाल्यमीकि रामायण के उल्लेखानुसार श्रीराम ने अंगद को रावण के दरबार में दूत बनाकर भेजा था। बाल्यमीकीय रामायण में दूत का पर्याय महत्व स्वीकार किया गया है। उसे मंत्री के समकक्ष बतलाया गया है। वह युद्धकाल में अन्य राजाओं से सम्बद्व स्थापित करने का कार्य करता था इससे स्पश्ट होता है कि दूत वस्तुतः रामायण काल में कूटनीतिज्ञ होता था। वह शत्रु के बलाबल के सम्बन्ध में पूर्व सूचनाऐं एकत्र करता था तथा तदनुसार निर्णय कर अन्य राज्यों से सन्धि या विग्रह के विषय में राजा को परामर्श देता था। रामायणकालीन दूत व्यवस्था के विशय में **डा. रामेश्वरप्रसाद गुप्त** लिखते है-

दूत अबध्य होता था। रामायण में दूत को मत्यु दण्य के अतिरिक्त अन्य दण्ड, अंग भंग बेंत लगबाना, सिर मुॅडाना आदि का विद्यान है। यद्यपि रामायण में दूत के लिये मत्यु दण्ड का विधान न था, कति में दूत सैनिक संगठन का महत्वपूर्ण अंग था।

रामायण के उपरान्त महाभारत में भी दूत व्यवस्था के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। महाभारत से यह स्पष्ट होता है कि राज्य तथा अन्तर्राज्य सम्बन्धों का संचालन प्रायः दूतों के माध्यम से ही होता था। सन्धि विग्रह का मुख्य कार्य दूत पर ही निर्भर रहता था तथा दूत की नियुक्ति के लिये राजा का आप्तपुरूष ही पात्र समझा जाता था। यदि वह विश्वासघात करता तथा अन्य राजा से सम्बन्धित वृत्तान्त को यथावत अवगत नही करता था तो उसे वध के योग्य माना जाता था। जैसा कि महाभारत के उद्योग पर्व में अद्योलिखित उल्लेख प्राप्त होता है।

यथोक्तं दूत आचस्टे वध्य स्यादन्यथाचर।

महाभारत उद्योग पर्व में यह घटना वर्णित हुई है कि द्रुपद के वद्ध पुरोहित तथा युधिष्ठर के दूत संजय तथा भगवान श्रीकृष्ण दूत के रूप में हस्तिनापुर गये थे। यद्यपि दुर्योधन ने दूत के रूप में श्रीकृष्ण का अपमान किया तथापि श्रीकृष्ण ने दूत के कर्त्तव्य का स्पष्ट रूप में प्रतिपादन किया, जो निम्न प्रकार उल्लेखनीय है।

कृतार्था युजते दूताः प्रजां गृहणन्ति चेदह।
कृतार्थ मां सहामात्यं समर्चिश्यसि भारत।।
अलघूकृतमग्रस्तमनिरस्तमसंकुलम।
राजीवनेत्रो राजानं हेतुमदवाक्यमुतमम।।

महाभारतकालीन राज्यव्यवस्था में महाभारत काल की दूत व्यवस्था के महत्व के सम्बन्ध में अधोलिखित टिप्पणी प्रस्तुत हुई है। कार्य के अनुरूप व्यक्ति को दूत का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। दूत के व्यक्तित्व और उसके कार्य के महत्व के अनुरूप ही उसे भेजने वाले राजा और प्रतिपक्षी भी उसका स्वागत और सत्कार करते थे तथा उसी के अनुरूप साज सामान तथा सेवको, परिजनो एवं अंग रक्षकों आदि की व्यवस्था उसके लिये भी की जाती थी। दूत गुप्तचरों का सा कार्य भी करते थे। कृष्ण के राजदूत बनकर हस्तिनापुर की ओर प्रस्थान करने की सूचना पहले ही धृतराष्ट के दूतों ने हस्तिनापुर पहुचाँ दी थी। आज कल के राजदूत भी प्रायः यही सब कार्य सम्पन्न किया करते हैं।

महाभारत में दूत को सर्वथा अवध्य कहा गया है। दूत तथा गुप्तचर की नियुक्ति के सन्दर्भ में कुछ आवश्यक योग्यताओं का प्रतिपादन भी सर्वप्रथम महाभारत में ही उपलब्ध होता है। इस सम्बन्ध में दूत के गुणों का उल्लेख करते हुये महाभारतकाल ने लिखा है -

कुलीनः शीलसम्पन्नों वाग्मी दक्षः प्रियंवदः।
यथोक्तवादी स्मर्षतिमान दूत स्यात सप्तभिर्गणैः।

अर्थात दूत को कुलीन, शीलवान, वाग्मी, दक्ष, प्रिय वचन बोलने वाला, सन्देश को ज्यों का त्यों कहने वाला ओर स्मरण शक्ति से सम्पन्न अर्थात इस प्रकार सात गुणों से युक्त होना चाहिये। उद्योग पर्व में दूत के आठ अन्य गुण बतलाये गये है। कहा है कि दूत को अहंकार रहित, सामर्थ्यवान, अदीर्घसूत्री, दयावान, मृदु, दूसरों के द्वारा अभेद्य, सर्वथा निरोग तथा उदारवाक्य, अर्थ गौरव से युक्त वाक्य बोलने वाला होना चाहिये।

महाभारत आदिपर्व में दूत व्यवस्था को अन्तर्राष्टीय स्तर पर भी क्रियान्वित किये जाने को उल्लेख मिलता है। मानव धर्मशास्त्र में दूत के विषय में विशेष जानकारी उपलब्ध नही होती है।

कौटिल्य अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों को बनाये रखने और राज्य के और विस्तार के लिये कूटनीति को और बडा महत्व देते हैं। उसके अनुसार कूटनीति की सफलता दूतों की भूमिका पर निर्भर करती है जिनकी उल्लेखनीय बुद्विमत्ता, गतिशील व्यक्तित्व, प्रतिकूल विरोधी परिस्थितियों को भी अनुकूल, मित्रतापूर्ण परिस्थितियों में बदल सकती है। परराश्ट्र सम्बन्ध और राजनय के आवश्यक साधन के रूप में कौटिल्य ने एक कुशल दौत्य व्यवस्था का भी प्रतिपादन किया है कौटिल्य कूटनीति को विदेश नीति का एक अत्यन्त आवश्यक अंग मानते है कूटनीति में कौटिल्य कृष्ण नीति को मान्यता देते है। षठे षाठयाम समाचरेत अर्थात षठ अर्थात दुष्ट के साथ कटुता का ही व्यवहार किया जाना चाहिये। कौटिल्य ने दूत को राजा का मुख्य कहा है। राजा उन्ही के माध्यम से पारस्परिक वार्ता विनिमय करते है। अर्थशास्त्र में कहा है कि - **दूतमुखा वै राजानत्वं चान्ये च।** अतः कौटिल्य दूत में होने वाली योग्यताओं का परिगणन करते हैं। उनके अनुसार दूत में मंत्री होने की योग्यता होनी चाहिये, वह देश का नागरिक हो, भलीप्रकार शिक्षित हो, लोकप्रिय और शिश्टाचारी हो, निर्भीक परिश्कष्त वक्ता हो उसमें सम्भाशण की प्रगल्भता हो, भव्य व्यक्तित्व का स्वामी हो और उसकी निष्ठा अविभाजित हो। दूत का स्तर मन्त्रिमण्डल के सदस्य के समकक्ष है। अतः कौटिल्य दूत में होने वाली योग्यताओं का परिगणन करते है तथापि कौटिल्य ने अधिकार और योग्यता की दृष्टि से दूत की तीन श्रेणियॉ

निर्धारित की हैं।

निःसृष्टार्थ – निःसृष्टार्थ वह दूत होता है जिससे आवश्यकता पडने पर राजा अपने प्रशासनिक उद्देश्य की भी पूर्ति कर सके। तात्पर्य यह है कि निसृष्टार्थ दूत इतना योग्य होना चाहिये कि समय आने पर वह मंत्री का भी कार्य कर सके। मंत्री के अभाव में राजा उससे यथेच्छ विचार विमर्श कर सके तथा परामर्श ले सके।

परिमितार्थ– परिमितार्थ वह दूत होता है, जो सीमित रूप में शासकीय प्रयोजन का साधक होता है। इसकी योग्यता अमात्य की योग्यताओं से कम होती तथापि उसे अपने कार्य का पर्याप्त परिज्ञान होता है तथा वह अपने कार्य के प्रति सतत जागरूक रहता है, जिस कार्य के लिये नियुक्त किया है, उस कार्य के लिये ही अपना उत्तरदायित्व निभाता है।

शासनहर – शासनहर वह दूत होता है जो अपने राजा के संदेश को अन्य राजा के पास ले जाता है तथा विधिपूर्वक अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों का संचालन करते हुये दूत कार्य की भूमिका का निर्वाह करता है।

निसृष्टार्थ दूतों को कुछ विशेषाधिकार दिये जाने की प्रचलित थी, जबकि परिमितार्थ दूतो को विशेषाधिकार नही दिये दिये जाते थे। शासनहरदूत को भी भृत्य के सामान माना जाता था। कौटिल्य ने दूतो के लिये एक आचारसंहिता का भी उल्लेख किया है, मुख्यतः अर्थशास्त्र के प्रथम अध्याय के १६वे अधिकरण में दूत से सम्बन्धित कई महत्वपूर्ण सदाचारों का उल्लेख किया गया है जो निम्नप्रकार की है-

१. दूत को अपने निश्चित यान, वाहन, नौकर चाकर और उत्तम सामग्री के साथ पर राज्य में रहना चाहिये।

२. परराज्य में वास करते हुये दूत को उस राज्य के अटविपाल, पुर, और राश्ट्र के प्रधान व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करते रहना चाहिये।

३. परराज्य के राजा की आज्ञा प्राप्त कर लेने के उपरान्त उस राज्य में प्रवेश करना चाहिये।

४. अपने राजा का सन्देश परराज्य के राजा के समक्ष ज्यौं का त्यौ प्रस्तुत करना चाहिये। लेष मात्र भी परिवर्तित रूप में प्रस्तुत नही करना चाहिये।

५. प्राण-बाधा उपस्थित होने पर भी उसे अपने राजा के सन्देश को लेष मात्र भी घटा बढा कर प्रस्तुत नही करना चाहिये।

६. जब तक परराज्य का राजा दूत को जाने की आज्ञा न दे दे उसे वही निवास करना चाहिये अर्थात दूत को परराज्य के राज से अनुमति लेकर ही अपने राज्य के लिये गमन करना चाहिये।

७. परराज्य की जनता के मध्य पहुँचकर अपने बल का प्रदर्शन नही करना चाहिये।

८. यदि परराज्य में कोई व्यक्ति अनिष्ट वाक्य बोलता है तो उसको भी सहन कर लेना चाहिये।

९. दूत के लिये परस्त्री-गमन और मध्यपान का नितान्त निशेध किया गया है।

१०. दूत को अकेले ही सोना चाहिये।

११. सुरा के मद में अथवा सोता हुआ मनुष्य अनर्गल बकने लगता है, जिससे रहस्य प्रकट हो जाता है।

१२. कौटिल्य ने दूत के लिये सुरापन एंव दूसरों के समीप शयन करने का निशेध किया है। यदि परराजा दूत से उसके राजा अथवा उसके राज्य की प्रकृतयों के विशय में भेद लेना चाहता है तो उसको कुछ भी भेद नही देना चाहिये।

१३. ऐसी परिस्थिति आ जाने पर आप सब कुछ जानते है यह कह कर टाल जाना चाहिये।

१४. दूत को अपने राजा की कार्य सिद्वी करने वाले वचन बोलना चाहिये।

१५. अपने स्वामी का सन्देश सुनाते हुये विरोधी राजा को यदि बुरा प्रतीत हो और वह उस दूत को बन्दी बनाना चाहता हो अथवा उसका वध करने को विचार कर रहा हो तो उस दूत को परराज्य से भाग जाना चाहिये।

दूतों के कर्त्तव्य – धर्मशास्त्र की परम्परा के अनुसार कौटिल्य ने राजदूत को शत्रु देष में रहते हुये वहा के अधिकारियों से मेल जोल बढाने, सेना के ठहरने योग्य युद्वभूमि, यथासम्भव भागने के मार्ग आदि का पता लगाने, शत्रु दुर्गो, राज्य विस्तार, धनधान्य रक्षा के साधनों, गुप्त शक्ति संग्रह करना, सन्धि भंग करना, शत्रु के मित्रों के बीच मतभेद उत्पन्न करना तथा शत्रु के कमजोर स्थलों का पता लगाने के साथ ही उसमें तोड-फोड की कार्यवाही करने, अपने राजा के बल पौरूष का बखान करने, उसके आवश्यक सन्देशों आदि को शत्रु देश में पहुंचाने आदि का कार्य सौपा है। कौटिल्य के अनुसार दूत को विविध प्रकार से अपनी पूरी सामर्थ्य से अपने देश के हित साधन के लिये कार्य करते रहना चाहिये। दूत के लिये कौटिल्य का आदेश है कि जिस देश में वह स्वदेश के प्रतिनिधि के रूप में रह रहा हो, उस देश के वनरक्षक, सीमा रक्षक, नगरवासियों तथा जनपदवासियों से मित्रता करे, उनकी सेनाओं के ठहरने के स्थानों का तथा युद्वभूमि का पता रखे और संयोग आने पर अपनी सेनाओं द्वारा युद्व में भाग ले सकने योग्य उपयुक्त स्थानों तथा रास्तों का भी निर्धारण करे। इसके अतिरिक्त शत्रुपक्षी राजा के दुर्ग, उसके राज्य की सीमाएं, आमदनी, उपज, आजीविका के साधन, राष्ट्र-रक्षा के तरीके, वहॉ के गुप्त भेद एंव शीर्षस्थ लोगों की बुराइयों आदि का पता लगाना भी कौटिल्य के अनुसार दूत का ही कर्त्तव्य है। प्राणान्तक परिस्थिति के उपस्थित हो जाने पर भी स्वामी का सन्देश अविकल रूप से कहना भी उसका कर्त्तव्य है। यदि शत्रु राजा उसके साथ अच्छा व्यवहार करता है तो उसे समझना चाहिये कि राजा उससे प्रसन्न है। इन दूतों को सौपे गये कर्त्तव्य अतीव दुष्कर और जोखिम भरे थे। उन्हे सन्देशहर का काम करना था।

कौटिल्य ने दूत व्यवस्था के साथ-साथ चर व्यवस्था का भी उल्लेख किया है। कौटिल्य लिखते है कि राजा प्रजानुरञ्जन के निमित्त प्रजा के सुख दुख दैनिक कार्य राज्य कर्मचारियों को प्रजा के प्रति व्यवहार, राज्य से सम्बन्धित आन्तरिक एंव बाह्य बाधाओं आदि के ज्ञान के लिये कुछ ऐसे कर्मचारी नियुक्त करता था। इस कर्मचारी को चर कहॉ जाता था। कौटिल्य ने चर व्यवस्था के संगठन को दृष्टि में रखकर चरों की ९ श्रेणियों का उल्लेख किया है जो निम्नप्रकार है-

१.कापटिक
२.उदास्थित
३.गृहपतिक
४.वैदेहक
५.तापस
६.सत्री
७.तीक्ष्ण
८.रसद
९.भिक्षुकि

चरों के ये नाम उनके कर्त्तव्यों एंव उनकी वेष-भूशा को इंगित करते है। कौटिल्य ने गुप्तचरों को दायित्व की दृष्टि से दो वर्गो में विभक्त करता है।

१ .संस्थागत गुप्तचर- जो एक ही स्थान पर अपने साथ अनेक लोगों को संस्था के रूप में रखकर अपने कार्य का सम्पादन करते है। उन्हे संस्थागत गुप्तचर कहते है।

२. संचार गुप्तचर- जो सदैव संचारण करते हुये अपने कार्यो का सम्पादन करते है। उन्हे संचार गुप्तचर कहते है।

आज के युग की भांति उस युग में भी दूत जो कुछ अपने राजा की ओर से सन्देश रूप में कहते थे, उसके विशय में उन्हे उन्मुक्तता प्राप्त थी। इसी कारण चाणक्य सुझाव देते है कि किसी निम्न जाति के दूत को भी नही

मारना चाहिये क्योकि वह अपने देश के राजा का सन्देश देकर मात्र अपने कत्तर्व्य का पालन कर रहा है। यह ऐसे युग में था जब यातायात और संचार के साधन मात्र अपनी अनुपस्थिति से ही पहचाने जाते थे। अतः कौटिल्य ने दूत विभाग पर अर्थशास्त्र पर विशेष ध्यान दिया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

१. डॉ. लल्लनजी सिंह, कौटिल्य का युद्व दर्शन, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, २०००।
२. डॉ. केदार शर्मा, प्राचीन संस्कृत वाड्मय में राजधर्म का स्वरूप, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर, २००६।
३. डॉ. एस. सी. सिंघल, प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, २००३।
४. डॉ. इकबाल नारायण, भारतीय राजनीतिक विचारक, ग्रन्थ विकास, जयपुर, २००५।
५. पी. के. त्यागी, भारतीय राजनीतिक विचारक, विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, २००६।
६. योगेन्द्र कुमार शर्मा, भारतीय राजनीतिक विचारक, कनिश्का पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, २००१।
७. ओम प्रकाश गाबा, भारतीय राजनीतिक विचारक, मयूर पेपरबैक्स, नौएडा, २००५।
८. डॉ. एस. एल. वर्मा एंव डॉ. बी. एम. शर्मा, भारतीय राजनीतिक विचारक, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, १९९६।
९. प्रो. पी. के. चढ्ढा एंव डॉ. इन्द्रजीत सिंह सोढी, प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, २००७
१०. https://hi.wikipedia.org/wiki/pk.kD; accessed on – 17-09-2017
११. डॉ. ओम प्रकाश प्रसाद, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, २०१४
१२. डॉ. रघुनाथ सिंह, कौटिलीयम अर्थशास्त्रम् कृष्णदास अकादमी वाराणसी, १९८३, पष्ठ १४९-१५७
१३. उदयवीर शास्त्री, कौटिलीय अर्थशास्त्र, मेहरचन्द्र लक्षमनदास पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २००१, १६ अध्याय, प्रकरण १२,पृश्ठ ५६-६१